दैनिक भास्कर

Date:16-03-23

कहीं विकास की यह गलत दिशा तो नहीं है ?

संपादकीय

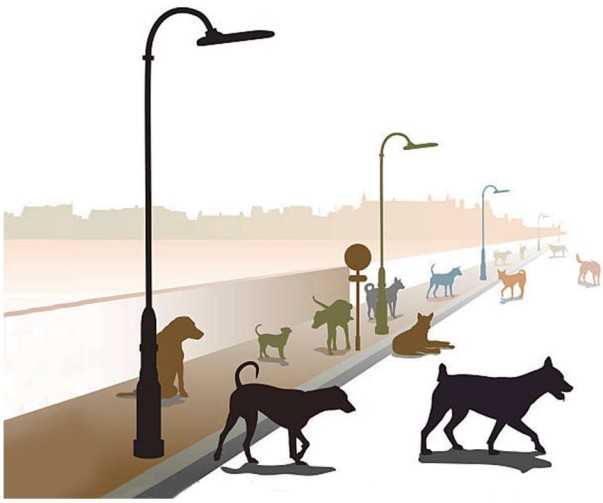

जिस दिन दक्षिण भारत के चुनाव वाले एक राज्य में एक राजमार्ग का उद्घाटन कर उसे विकास का नया आयाम बताया जा रहा था, उसी दिन देश की राजधानी दिल्ली के पॉश इलाके से सटी झुग्गी बस्ती में सात व पांच वर्ष के दो सगे भाइयों को दो दिन के बीच आवारा कुत्तों ने हमले में नोचकर मार दिया। इस घटना पर दिल्ली की सभी स्थानीय इकाइयों जैसे नगर महापालिका और प्रशासन को सतर्क होना चाहिए था, लेकिन शायद गरीब का बच्चा उन्हें एक्शन में लाने के लिए पर्याप्त कारण नहीं बन पाया। दिल्ली नगर निगम पर 'आप' का कब्जा है और पुलिस प्रशासन केंद्र सरकार के अधीन है। राजनीतिक वर्ग इस बात पर विवाद करता रहा कि विदेश जाकर सरकार की बुराई करना देश का अपमान है या नहीं। वह यह भूल गया कि सोशल मीडिया के जरिए पूरी दुनिया यह जानेगी कि वैश्विक जीडीपी में पांचवें स्थान पर गर्व से खड़े भारत की राजधानी में रहने वाले गरीब के बच्चे शौच के लिए आज भी पास के जंगल में जाते हैं और वहां आवारा कुत्तों का शिकार बनते हैं। चिंता इस बात पर है कि देश की औसत प्रति व्यक्ति आय से पांच गुना आय वाले इस शहर के संभ्रांतीय चरित्र वाले लोग इन बच्चों की मौत पर सड़कों पर नहीं आए। ना ही श्रद्धांजलि के रूप में इंडिया गेट पर दिए जलाए। उधर पुलिस ने कहा है कि उसने नगर निगम को कुत्ते पकड़ने की सूचना दे दी है। जांच जारी है।

जनसत्ता

Date:16-03-23

बंदूक के विरुद्ध

संपादकीय

अमेरिका में आए दिन ऐसी खबरें आती रहती हैं कि किसी सिरफिरे ने अपनी बंदूक से कहीं स्कूल में तो कभी बाजार में अंधाधुंध गोलीबारी शुरू कर दी और उसमें नाहक ही लोग मारे गए। प्रथम दृष्टया यह कोई आपराधिक या आतंकवादी घटना की तरह लगती है, जिसमें सुनियोजित तरीके से ऐसी वारदात को अंजाम दिया जाता है। कई मामलों में ऐसा संभव भी है। लेकिन इसके पीछे एक बड़ा कारण वहां आम लोगों के लिए हर तरह के बंदूकों की सहज उपलब्धता है। कोई घातक हथियार साथ में होने के बाद मामूली बातों पर होने वाले झगड़े या फिर बेवजह ही किसी के उन्माद से ग्रस्त हो जाने पर कैसे नतीजे सामने आ सकते हैं, अमेरिका ने उसे करीब से देखा है, जहां हर साल सैकड़ों लोग इसकी वजह से मारे जाते हैं। किसी भी संवेदनशील समाज को इस स्थिति को एक गंभीर समस्या के रूप में देखना-समझना चाहिए। यह बेवजह नहीं है कि जिस अमेरिका में ज्यादातर परिवारों के पास अलग-अलग तरह की बंदूकें रही हैं, वहां अब इस हथियार की संस्कृति के खिलाफ आवाजें उठनी शुरू हो गई हैं।

इसी के मद्देनजर अमेरिका के राष्ट्रपति जो बाइडेन ने मंगलवार को बंदूक के दुरुपयोग पर अंकुश लगाने से संबंधित एक नए कार्यकारी आदेश पर हस्ताक्षर कर दिए। इसके तहत बंदूक की बिक्री के दौरान की जाने वाली 'पृष्ठभूमि जांच' को बेहतर बनाया जाएगा। इसके जरिए बाइडेन ने मंत्रिमंडल को बंदूक हिंसा से जूझ रहे समुदायों के समर्थन के लिए एक बेहतर सरकारी तंत्र बनाने का निर्देश दिया है। यह छिपा नहीं है कि बिना किसी वजह के की गई गोलीबारी में किसी प्रियजन को गंवाने वालों को किस तरह के मानसिक आघात और अन्य मुश्किलों से जूझना पड़ता है। अब नए आदेश के तहत शोक और आघात का सामना करने वाले लोगों को अधिक मानसिक स्वास्थ्य सहायता, पीड़ितों और लंबी पुलिस जांच प्रक्रिया के दौरान बंद होने वाले कारोबारों को वित्तीय मदद भी मुहैया कराने का प्रावधान किया गया है। लेकिन सबसे ज्यादा जरूरत बंदूकों की निर्बाध बिक्री करने वाले और उसके खरीदारों पर अंकुश लगाने की थी। अब संघीय लाइसेंस प्राप्त बंदूक कारोबारियों के लिए नियम बनाने का निर्देश गया है, जिसके तहत डीलरों की पृष्ठभूमि की जांच जरूरी होगी।

दरअसल, मामूली बातों पर आवेश में आकर बंदूक चला देने के पीछे हाथ में हथियार होने से जुड़ा मनोविज्ञान काम करता है। यों भी हिंसा के स्वरूप में ज्यादा विकृति और क्रूरता हथियारों की सुलभता पर निर्भर है। हत्या की ऐसी घटनाएं आमतौर पर इसलिए होती हैं कि गुस्से या अपनी कुंठाओं पर काबू नहीं रख पाने वाले किसी उन्मादी व्यक्ति के पास गुस्से में होने के वक्त बंदूक उपलब्ध थी। ऐसे मामले आम हैं, जिनमें आपसी वाद-विवाद में आक्रोश और उत्तेजना के चरम पर पहुंच जाने के बाद भी दो लोगों या पक्षों में सुलह हो जाती है, क्योंकि उनके पास तकरार के वक्त हथियार नहीं रहा होता है। अब अमेरिका में हुई ताजा कवायद की अहमियत यह भी है कि लंबे समय से बंदूकों की सहज उपलब्धता का खमियाजा उठाने के बाद वहां के लोगों ने अपने स्तर पर भी इसके खिलाफ मोर्चा खोलना शुरू कर दिया है और वहां जनता के एक बड़े हिस्से के बीच आक्रोश काफी बढ़ गया है। पिछले साल जून में भारी तादाद में लोगों ने सड़कों पर उतर कर बंदूकों की खरीद-बिक्री से संबंधित कानून को बदलने की मांग की। जरूरत इस बात की है कि इस

समस्या के पीड़ितों को राहत देने के साथ-साथ बंदूकों के खरीदार से लेकर इसके निर्माताओं और बेचने वालों पर भी सख्त कानून के दायरे में लाया जाए।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:16-03-23

एक अलग तरह के विवाह की मांग

आनंद कुमार, (समाजशास्त्री)

समलैंगिक विवाह को लेकर भारत ही नहीं, दुनिया भर में बड़ी बहस चल रही है। दरअसल, मानव जीवन में विवाह नामक संस्था का केंद्रीय स्थान है और इसे वयस्क जीवन में मर्यादा स्थापित करने वाली व्यवस्था माना जाता है। चूंकि हर धर्म में इस संस्था को बड़ी सावधानी से संजोया गया है, इसलिए विभिन्न परंपराओं में परिवर्तन संभव होने के बावजूद विवाह से जुड़ी मान्यताओं और परंपराओं में फेरबदल शायद बदलाव की आखिरी सीमा होती है। इसकी वजह यह भी है कि विवाह की व्यवस्था को मानव समाज की लगभग तमाम संस्कृतियों में परिवार और प्रजनन, यानी नई पीढ़ी के निर्माण से जोड़कर देखा गया है।

समलैंगिक विवाह में निस्संदेह संतान उत्पत्ति की भूमिका समाप्त हो जाती है, लेकिन विवाह का एक अन्य पक्ष है, स्नेह की डोर। ऐसे कई उदाहरण हैं, जिनमें बिना पूर्व जान-पहचान के शादी होती है, पर वे इसलिए असफल नहीं मानी जातीं, क्योंकि उनमें स्त्री और पुरुष मिलकर संतान को जन्म देते हैं, नई पीढ़ी का निर्माण करते हैं। इसी कारण समलैंगिक विवाह के समर्थकों को विवाह से जुड़ी पारंपरिक दृष्टि से लड़ना पड़ रहा है कि जिस विवाह में संतान के जन्म की गुंजाइश न हो, वह भला कैसे निभेगा? इसके जवाब में समलैंगिक विवाह के समर्थक सिर्फ स्नेह या प्रेम पक्ष की ओर इशारा कर पाते हैं।

फिलहाल, दुनिया भर में पश्चिमीकरण की हवा चल रही है और अमेरिका से लेकर जर्मनी व फ्रांस तक में समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता मिल चुकी है। ऐसे में, भारतीय समाज में पश्चिमीकरण से प्रभावित लोगों के बीच समलैंगिक विवाह के पक्ष में माहौल बनाना मुश्किल नहीं होगा, लेकिन इसे पूरे समाज की मंजूरी दिलाने के लिए सिर्फ कानूनी व्यवस्था पर्याप्त नहीं होगी, इसीलिए समलैंगिक विवाह को लेकर जो सामाजिक चिंतन है, उस पर समाजशात्रियों की निगाह दोनों पक्षों पर है। देखा जाए, तो समलैंगिक विवाह को व्यक्तिगत जीवन के अधिकार क्षेत्र का निर्णय मानने वाले भी अनुचित नहीं कह रहे हैं। पसंद के दोस्त के साथ सहजीवन की स्वतंत्रता भी व्यक्ति की स्वतंत्रता में निहित है। ऐसा भी नहीं कि हमारे समाज में समलैंगिक नहीं रहे हैं, पर मित्रता का निर्वाह करने वाले दो स्त्री या दो पुरुष को समाज में सम्मानजनक जोड़ा नहीं माना जाता। यह एक चुप्पी का क्षेत्र रहा है।

वैसे यह बात छिपी नहीं है कि अब तक भारतीय समाज को अनेक बार विवाह संस्था की समीक्षा की जरूरत महसूस हुई है। जब देश पर ब्रिटिश सरकार काबिज थी, तब उसके दो बड़े दोष सामने आए थे, जिस पर समाज सुधारकों और

परंपरावादियों के बीच खुली बहस भी हुई थी। एक था बाल विवाह का चलन, जिसके खिलाफ अंग्रेजी राज की मदद से समाज सुधारकों ने जब कानून बनवाए, तब तमाम पारंपरिक संस्थानों व प्रतिष्ठानों की तरफ से प्रखर विरोध के स्वर उठे। उनका तर्क था कि इससे उनकी संस्कृति नष्ट हो जाएगी, लेकिन धीरे-धीरे हमने बाल विवाह को एक अनुचित परंपरा के रूप में देखना शुरू कर दिया। इसके खिलाफ अब सामान्य जनमत बन चुका है। इसी तरह, विधवा विवाह को लेकर भी बगावत जैसी परिस्थितियां बनीं। शुरू-शुरू में तो ऐसी शादियों में विधवाओं पर लांछन तक लगाए गए। मगर बाद में यह भी परंपराविरोधी और क्रांतिकारी काम माना गया। हालांकि, इन दोनों के अलावा पिछले 100 साल में विवाह संस्था में कुछ अन्य बदलाव भी हुए, जैसे- तलाक (विशेषकर हिंदुओं में इसे लेकर बहुत विवाद था) और तलाकशुदा स्त्री या पुरुष का विवाह। समाजशात्रियों का मानना है कि ऐसा ही बदलाव समलैंगिक विवाह को लेकर भी मुमकिन है, पर समाज की स्वीकृति पाने के लिए अभी धैर्य रखना पड़ेगा, अच्छे तथ्यों व अकाट्य तर्कों की जरूरत पडेगी।

यह कोई छिपा रहस्य नहीं है कि समाज का एक उल्लेखनीय हिस्सा ऐसे संबंधों को जीता है, अब यह गैर-कानूनी भी नहीं है, पर अभी ऐसे लोगों को सम्मान की नजर से नहीं देखा जाता है। इसीलिए समलैंगिक विवाह को मंजूरी एक बड़ा बदलाव होगा और इस बदलाव को सहज बनाना इसके समर्थकों की बड़ी जिम्मेदारी होगी। अगर वे आक्रामक हुए और उन्होंने प्रगतिशील व परंपरावादी जैसा वर्गीकरण किया, तो मुश्किलें पेश आएंगी। रही बात परंपरा के पक्षधरों की, तो समाजशात्रियों का अनुमान है कि वे धीरे-धीरे बदलाव के लिए तैयार हो जाएंगे, ऐसा पहले हुआ है।

आज पश्चिमी दुनिया में समलैंगिक विवाह को मान्यता मिल चुकी है। हालांकि, इसमें भी 30-40 वर्षों का वक्त लगा। इसका चर्च ने विरोध किया, परिवार बचाओ आंदोलन खड़े किए गए और तमाम सांस्कृतिक व सामाजिक तर्क परोसे गए, पर आहिस्ता-आहिस्ता समलैंगिकता में रुझान रखने वाले लोगों ने कानून व राज-सत्ता को अपने पक्ष में कर लिया। भारत में यह प्रक्रिया तुलनात्मक रूप से धीरे-धीरे चली है। हमने हाल-फिलहाल ही समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से बाहर निकाला है। जाहिर है, भारतीय समाज के समाज वैज्ञानिक विश्लेषण में समलैंगिकता कोई नई परिघटना नहीं है, पर समलैंगिक विवाह एक नए प्रकार का प्रबंध होगा, जिसे स्वीकार करने में कम से कम एक पीढ़ी का वक्त लग जाएगा। फैसला सुप्रीम कोर्ट की पांच सदस्यीय संविधान पीठ को लेना है और फैसला आसान नहीं है।

समाज की रचना के लिए जिन बुनियादी संस्थाओं की व्यवस्था की गई है, उनमें यौन या वयस्क जीवन के लिए विवाह और परिवार नामक दो संस्थाएं बुनियाद हैं। इन संस्थाओं में धर्म, वर्ग, क्षेत्र आदि के आधार पर विविधता तो है, पर एक ही प्रकार के लोगों का परस्पर विवाह नई बात होगी, क्योंकि परिवारों या विवाहों में समलैंगिकता वाला पक्ष कहीं सामने नहीं आया है। हालांकि, एक ही परिवार में विवाह की परंपरा दिखती है। जैसे, मिस्र के राजपरिवार में शुद्धता के नाम पर भाई व बहन की शादी होती थी, पर बाद में यह भी त्याज्य हो गया। ऐसे में, भारत का कानून यदि समलैंगिक विवाह को मान्यता देता है, तो समाजशास्त्रीय अध्ययन में समलैंगिक जोड़ों के विवाह या परिवार का नया अध्याय जुड़ेगा। समलैंगिक संबंध का नैतिक और ऐतिहासिक आधार पर पक्ष-विपक्ष स्पष्ट है, पर दुनिया में ऐसा कोई समाज नहीं दिखा है, जहां समलैंगिकता मुख्य प्रवृत्ति रही हो। हमारा समाज स्त्री-पुरुष संबंध की बुनियाद पर ही टिका है।